International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 5.414 Volume 5, Issue 12, December 2018
Website-www.aarf.asia,**Email**:editor@aarf.asia, editoraarf@gmail.com

अन्त:प्रेरणा की अभिव्यक्ति में विकसित होता सहगल–साहित्य

(श्री हरदर्शन सहगल के साथ भेंटवार्ता)

भूपेश, सहायक आचार्य एवं शोधार्थी
(पीएच.डी.–हिन्दी)
महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर
(शोध निर्देशक–डॉ. जयश्री सेठिया)

श्री हरदर्शन सहगल राजस्थान के प्रसिद्ध साहित्यकार हैं, जिन्होंने कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा, लघुकथा एवं सामयिक लेखन सहित विविध विधाओं से साहित्य की श्रीवृद्धि करने में महती भूमिका निभाई है। इनके साहित्य में विभाजन और विस्थापन की वेदना है, तो नव–निर्माण का संकल्प भी है। प्रतिकूलतम परिस्थितियों में भी जीवन के प्रति आस्था और समायोजन का संदेश देने वाले सहगल–साहित्य में स्वंतत्रता के बाद की बहुविध संवेदनाएँ यथार्थ–बोध से समन्वित होकर पाठकों के मानस पटल पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाती है। बीकानेर की डुप्लेक्स कॉलोनी स्थित 'संवाद' (आवास) पर उनकी साहित्यिक यात्रा के बार में विस्तार से चर्चा हुई। सहायक आचार्य के पद कार्यरत और पीएच.डी. शोधार्थी भूपेश के साथ हुई इस बातचीत के प्रमुख अंश प्रस्तुत है –

भूपेश : नमस्कार सहगल साहब, साहित्यिक क्षेत्र में आपकी विशिष्ट उपलब्धियों और योगदान को देखते हुए राजस्थान पत्रिका द्वारा सम्मानित किए जाने पर बधाई। इस भेंट वार्ता में मेरा पहला प्रश्न आपके पारिवारिक और साहित्यिक परिवेश के सम्बन्ध में है। आपका बचपन पाकिस्तान के पंजाब सूबे में बीता और किशोरवय भारत के पंजाब और उत्तरप्रदेश में।

© Associated Asia Research Foundation (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

पंजाबी और ऊर्दू से नजदीकी के बावजूद आपने हिन्दी भाषा को लेखन का माध्यम बनाया। इस सम्बन्ध में कुछ बताइए।

सहगल साहब : असल में, मैं केवल पंजाब में ही नहीं रहा, बल्कि पेशावर, अफगानिस्तान जैसे इलाकों से सम्बन्धित रहा कुन्दिया, पंजाब जहाँ मेरा जन्म हुआ। करोड़ लालिसन में हमारा पुश्तैनी मकान हैं, यह जिला मुजफ्फरगढ़ में था। मैं अफगानिस्तान, पेशावर में भी रहा, फिर सिन्ध में रहा, उसके बाद ..... और कई जगह से सम्बन्धित हूँ। करोड़ और कुन्दिया जैसी जगहों पर रहा। किला शेखुपुरा में मैंने थोड़ा–सा होश सम्भाला, उसके बाद फिर, जब पाकिस्तान का निर्माण हुआ, तब मैंने कितने धक्के खाए। मेरी आत्मकथा में सब कुछ लिखा हुआ है। जहाँ तक प्रश्न हिन्दी में लिखने का है, वो दीगर बात है। असल में क्या है कि मैं पंजाबी, सरायकी, ऊर्दू, हिन्दी और अंग्रेजी पाँच भाषाओं का ज्ञाता हूँ और मेरी कहानियों में ये सारे के सारे शब्द, वाक्य और तौर–तरीका, उनकी टोन सब सम्मिलित है। और जहाँ तक प्रश्न आपका हिन्दी में लिखने का है। हम तो हिन्दी को घटिया भाषा मानते थे और ऊर्दू को बढ़िया। लड़कियों को हिन्दी और लड़कों को ऊर्दू पढ़ाते थे, हम हिन्दी का मजाक उड़ाते थे, हिन्दी क्या मुश्किल है? (हाथ से कुछ इशारा करते हुए) यूं–यूं करो, ऊपर लाईन खींच दो, हिन्दी बन गई। हुआ ये कि मेरा कुछ रुझान इस तरह का था कि सनातन धर्म स्कूल में मैंने पढ़ाई करी। संस्कृत और हिन्दी मैंने ऑप्ट की, ऊर्दू से फिर भी साथ लगा रहा। उसके बाद देश विभाजन हुआ तो मेरी कथाओं में..... ऊर्दू के बिना वो कथा पूरी हो ही नहीं सकती, पंजाबी के बिना वो कथा पूरी हो ही नहीं सकती। ये शब्दावली रची–बसी है। मुझे नहीं लगता कि मैं केवल हिन्दी और प्योर हिन्दी और पाण्डित्य वाली हिन्दी लिखूँ, सारा मिला हुआ है। ऊर्दू में मैंने लिखा, ऊर्दू में मैं छपा और उसके बाद मेरा ऊर्दू से मोहभंग हुआ। पंजाबी वालों ने मुझे ऑफर दिया कि आप पंजाबी में कुछ लिख कर भेज दीजिए। मैंने कहा– भैया अब मेरी सोच की भाषा हिन्दी है और मैं अब हिन्दी में ही लिखता हूँ। हिन्दी में इतना कुछ है कि मैं दूसरे चक्करों में पड़ नहीं सकता। मगर वो जो टोन है पंजाबी, अंग्रेजी, ऊर्दू या ठेठ सरायटी भाषा, ये शब्दावली मेरी कहानियों में रची बसी है। इनकी लेंग्वेज को देखकर कोई भी समझ जाता है कि सहगल साहब की लिखी हुई है।

भूपेश : सहगल साहब, आपकी साहित्य सृजन की प्रेरणा के बारे में कुछ बताइए।

सहगल साहब : आप मानेंगे! जब मैं ढाई साल का था, तभी से लिख रहा हूँ, ये कोई प्रेरणा की बात नहीं है। ये जन्मजात, ... कुछ अपने अंदर बसा हुआ आता है। कई लोग बच्चों से पूछते हैं कि भाई तू बड़ा होकर क्या बनेगा? तो बच्चा जवाब देता है कि मैं डाक्टर बनूँगा या और कुछ बनूँगा, लेकिन मेरे मुँह से अपने आप निकला कि कवि बनूँगा। मेरे पास एक एलबम है, बहुत शौक था फोटोग्राफी का। मैंने अपने कोडक कैमरे से कई फोटो लिये और अपने हाथ से एलबम बनाई और एलबम में सबसे पहले क्या कारण था कि रवीन्द्रनाथ टैगोर का फोटो लगा दिया। ये सारा जन्मजात एक अंतःप्रेरणा से लिखा जाता है। न किसी को देख कर न किसी की नकल करके। मैंने अभी कोई एक लेक्चर दिया था, तो मैंने यही कहा था कि भैया आपने बहुत प्रशंसा कर दी कि सहगल साहब ने 40 किताबें लिखी है। मगर सच्चाई यह है कि ये मैंने नहीं लिखी, यह मुझसे लिखी गईं।

भूपेश : आपके रूम में एन्टोन चेखव की फोटो लगी हुई है और इधर जो आपके प्रोफेसर रामेश्वर दयाल जी .....

सहगल साहब : हाँ, ये जरूर है। ये भी रचनाधर्मिता के साथ में जुड़ी हुई है। अभी भी मेरे पास 1956 का एक हिन्दुस्तान का कटिंग है, उसमें चेखव की कहानी ..... क्या नाम है उस कहानी का ..... (याद करते हुए) हाँ! 'आठ रूबल' यही शीर्षक है। उसको मैंने पढ़ा ओ हो! क्या असर किया उसने मुझ पर, जादू ही कर दिया। मैं पागल हो गया। चेखव! वो लेखक जिसका मैंने नाम ही नहीं सुना। मैं फौरन सब कुछ समझ गया। ये क्या अंतःप्रेरणा उसको समझने का माद्दा मुझ में समाया हुआ था। चेखव की तलाश में दिल्ली की सड़कों पर घूमता फिरा। मुझे वार्ड नं. 06 मिल गई। ये किताब मेरे लिए गीता के समान है। मैंने कई दफा उसे रिपीट किया। चेखव मूलतया डॉक्टर थे। अपनी कहानी में वो पागल खाने के बारे में लिखते हैं कि जो लोग अन्दर हैं उनको तो बाहर होना चाहिए और जो बाहर हैं उन्हें अन्दर होना चाहिए। हकीकत में ये दुनिया पागलों की है। चेखव का जीवन–दर्शन बहुत ही आकर्षक है। इतनी छोटी–सी उम्र में ..... 1860 में पैदा हुआ और 1904 में गुजर गया। वही मेरा गुरू है। अगर आप चाहे तो मैं चेखव की 80 कहानियाँ जुबानी सुना सकता हूँ। चेखव जैसा कोई नहीं हुआ। हालांकि कुछ अच्छे लेखक हैं– मोपासां है, पर्ल बक है, बहुत हैं। मैंने ये भी लिखा कि मौजूदा भारतीय लेखन विदेशी लेखन से कम है। गोर्की, टोल्स–टोय, उनके बाद तुर्गनेव, पुशकिन, ओसत्रोव्स्की, फ्योदोर

दोस्तोवस्की .....एक दम से कैसे पूरी एक टीम बनी और संसार में अपना दबदबा दिखाया।

भूपेश : सहगल साहब, जीवन और लेखन में आप किस विशेष विचारधारा या चिंतन से प्रभावित रहे?

सहगल साहब : विचारधारा न अपनाने से मुझे कुछ नुकसान हुए, मगर सच्चाई यह है कि किसी विचारधारा से जुड़ने का मतलब है– पार्टी लाईन के ऊपर बोलना, जो कि आपका दिल गवाही नहीं देता है। इसलिए मैंने कोई भी विचारधारा, कोई भी वाद नहीं अपनाया। मेरी रचनाओं में सब–कुछ स्वतः प्रेरित है। मैं जो लिखता हूँ वस्तुतः वह मुझसे लिखा जाता है। मैंने किसी विमर्श या वाद को ध्यान में रख कर नहीं लिखा।

भूपेश : आपने साहित्य की अलग–अलग विधाओं में लेखन किया। कहानियाँ लिखी, उपन्यास लिखे, हास्य–व्यंग्य भी है और नाटक भी। इनमें से कौनसी विधा आपको सबसे अधिक आकर्षित और रोमांचित करती है?

सहगल साहब : असल में, मैंने लिखना कहानी से ही शुरू किया है और कहानी ही मेरी प्रिय विधा है। उसके बाद मैंने बाल कहानियाँ भी साथ–साथ शुरू कर दी। मेरी 100 कहानियों का संकलन बाल साहित्य चार भागों में है और बड़ों की कुल कहानियाँ लगभग 250 हैं। बाकी निबन्ध, कविताएँ थोड़ी लिखी जो छपी हैं। उसके बाद बाल कविताएँ लिखी जो काफी अच्छी और बड़ी–बड़ी पत्रिकाओं में खूब रंग–ढंग से छपी है। बाकी दूसरी विधाओं की बात है तो ये भी स्पोनटेनियस ही है कि जब भी दूसरी विधा में लिखते है तो सब कुछ चेंज करना पड़ता है। अपने आप चेंज हो जाता है। उसकी भाषा कहानी की भाषा नहीं होती। रेखाचित्र लिखे तो रेखाचित्र की भाषा होगी। निबन्ध लिखेंगे तो निबन्ध की अलग भाषा होगी। सारी भाषा, सारा स्ट्रक्चर बदल जायेगा। तभी इंसाफ होता है।

भूपेश : आपने देश विभाजन की त्रासदी को देखा और भोगा है। विभाजन को आधार बनाकर खूब सारे रचनाकारों ने अलग–अलग उपन्यास और कहानियाँ लिखी हैं। उन में से आप सबसे अधिक मार्मिक और हकीकत के करीब किसको मानते है और आपकी रचनाएँ उनसे किस तरह अलग है?

सहगल साहब : मन्टो विभाजन का मास्टर मैन है। मोहन राकेश की भी कुछ कहानियाँ हैं, बॉर्डर का कुत्ता या ऐसा ही कुछ नाम है (वास्तविक शीर्षक–टिटवाल का कुत्ता)। बहुत जबरदस्त कहानी है। करतार सिंह दुग्गल की भी एक कहानी है। यशपाल का 'झूठा सच' भी बहुत प्रभावित करता है। और भी बहुत सारे हैं।

भूपेश : सहगल साहब, आजादी की पृष्ठभूमि में देश में साम्प्रदायिक हिंसा चरम पर थी। इसके समाधान के लिए देश विभाजन तक को स्वीकार किया गया। आपकी दृष्टि में ये उपाय कितना कारगर रहा या नहीं रहा?

सहगल साहब : भाई, दरअसल लोग कहते हुए हिचकिचाते हैं। जो सैकुलर कहलाते है और उस हिसाब से बात करते हैं। सच्चाई यह है कि पहली बात विभाजन क्यों हुआ। मुस्लिम कहते थे कि हम अलग कौम हैं, अलग राष्ट्र हैं और हिन्दुओं के साथ नहीं रह सकते तो पाकिस्तान अस्तित्व में आया। उसके गुनहगार कौन थे? पटेल, जिन्ना, नेहरू और गांधी ये सब उसके गुनहगार थे। विभाजन हो गया। पहले दो राष्ट्र की बात कही गई, जब हिन्दुस्तान बना तो हिन्दुओं के लिए बना और पाकिस्तान मुसलमानों के लिए। लेकिन बाद में क्या हुआ, आप जानते हैं। विभाजन के बावजूद अभी भी साम्प्रदायिकता की समस्या बनी हुई है। जिस विस्थापन को हमने भोगा, वो आज तक बरकरार है।

भूपेश : विस्थापन के दूसरे पहलू के रूप में शरणार्थी समस्या भी है। पाकिस्तान, बांग्लादेश और अभी बर्मा से रोहिंग्या शरणार्थी आ रहे हैं। कश्मीर घाटी सहित अन्य स्थानों पर देश के भीतर होने वाले विस्थापन के दृश्य भी दिखाई देते हैं। इनके बारे में आपके क्या विचार हैं?

सहगल साहब : इस सम्बन्ध में मेरे बहुत कटु विचार हैं। दरअसल गॅवर्मेन्ट जो चाहती है वही होता है। पाकिस्तानी गॅवर्मेन्ट ने नहीं चाहा कि हिन्दू वहाँ रहे तो उन्होंने कत्ले–आम करवाया। मैं जहाँ से विस्थापित हुआ हूँ, किला शेखुपुरा से, वहाँ एक बादशाह का बहुत बड़ा किला था, उसमें जाकर हिन्दू छुप गए। किले का दरवाजा इतना मजबूत था कि नहीं टूटना था। दंगाईयों ने कितना ही जोर लगाया फिर हाथियों को लेकर आये लेकिन दरवाजे के मजबूत कीलें लगी हुई थी तो हाथी भी डर गए। उसके बाद टेंक आया। आप ही सोचो कि दंगाईयों को तलवारें, कटारें और कुछ बन्दूकें भी मिल सकती है, लेकिन दरवाजा तोड़ कर टेंक किले में आ गये और सबको लाईन में खड़ाकर गोलियों से भून दिया गया।

आज हमारे देश में कश्मीर, बांग्लादेशी घुसपैठियों की जो समस्या है वो सब सरकार की ढुल–मुल नीतियों के कारण है। हम वर्ल्ड ऑपिनियन से डरते हैं, पाकिस्तान नहीं डरता। वो हमेशा अपने एग्रेशन का फायदा उठाता है। कश्मीरी पण्डित अब तक अपने ही देश में विस्थापित हैं। औद्योगिक विकास भी विस्थापन का एक बड़ा कारण बनता जा रहा है।

भूपेश : आपकी पहली कहानी सन 1967 में प्रकाशित हुई और लगभग पिछली आधी शताब्दी से आप लगातार लिख रहे हैं। इस दौरान साहित्य के क्षेत्र में क्या–क्या बदलाव हुए?

सहगल साहब : खूब सारे बदलाव हुए हैं, आज का लेखक ज्यादा विस्तारवादी होते–होते अपनी दुर्गति करवा बैठा है। लेखक अपने दायित्व से भटक गया है और यथार्थवाद के नाम पर कई ऐसी चीजें ..... फलाना–ढिगाना पता नहीं क्या–क्या लिख रहे हैं। आप देखिये ये जो तिकड़ी बनी – मोहन राकेश, कमलेश्वर और राजेन्द्र यादव– उन्होंने भी यथार्थ के नाम पर ऐसा ..... (कुछ भूलते हुए, कुछ ..... याद करते हुए) निर्मल वर्मा ..... उनका पूरा साहित्य विदेश परिवेश से जुड़ा हुआ आयातित साहित्य है। वो अपनी जड़ों से उत्प्रेरित नहीं है। मैंने अपनी आत्मकथा में बताया है कि दिल्ली और गाजियाबाद जैसे महानगरों में आज भी लोग कितने अच्छे हैं, सहयोग करने वाले हैं। लेकिन आज के दौर में जो महानगरीय यथार्थ लिखा जा रहा है, वह अपूर्ण है।

भूपेश : सूचना और तकनीकी क्रांति ने साहित्य को किस प्रकार प्रभावित किया?

सहगल साहब : इसने साहित्य का अहित ही किया है, हित तो नहीं किया। अब पढ़ने की आदत खत्म होती जा रही है, लिखने की आदत भी छूट रही है। जो भी बकवास, कचरा है उसे नेट पर डाल देते हैं। आधुनिकता का दावा करने वाले साहित्यकार को इस पर भी तो लिखना चाहिए। किसी रचना में लेखक द्वारा खुद को खोकर लिखना, उसको आत्मसात करना और रचना में अपनी तलाश करना, अपने आपको जानना, समझना। वो प्रक्रिया भी खत्म हो रही है। रचना तभी बहुत अच्छी बनती है जब लेखक उसमें बहुत कुछ अनकहा छोड़ दे। अगर पाठक को भागीदार नहीं बनाया और सब कुछ कह दिया तो पाठक के लिए क्या बचा?

भूपेश : आपकी बात सुनकर लगता है कि आज पाठक और लेखक के बीच में कुछ तालमेल नहीं बन पा रहा?

सहगल साहब : कविता में पहले लय थी, तुकान्त काव्य था। वो ऐसा था कि सुनते ही याद हो जाए। हमारे जितने भी प्राचीन ग्रंथ हैं मौसम के ऊपर, व्यवहार और शिक्षा के ऊपर और दूसरे ज्ञान–विज्ञानों से संबंधित हैं, लगभग सब मौखिक और तुकान्त हैं। आज की कविता याद नहीं रहती। 'चकमक' में बड़े–बड़े कवियों की बारिश और पानी के ऊपर कविता छापी गई। मैंने उनको पोस्टकार्ड लिखा कि ये चर्चित कवि हैं और इनकी कविताएँ बेशक अच्छी हैं, चर्चा में हैं और ये कवि भी चर्चा में हैं मगर हकीकत यह है कि मुझे अच्छी तो लगी, मगर मैं भूल गया। याद रही तो कबीर की याद रही– ''ये जग पानी का बुलबुला।''

भूपेश : आपके मौजूदा लेखन कार्य के बारे में कुछ बताइए।

सहगल साहब : इन दिनों तबीयत कुछ ठीक नहीं है। मगर लिखना मेरी प्रवृत्ति में है। एक कहानी मैंने अभी कम्पलीट की है, एक बीच में है। मैंने एक कहानी दिल्ली में तीन जगह भेजी और तीनों ही जगह– एक रेप्यूटिड पत्रिका में, अखबार में और फिल्मी दुनिया में– एक साथ ही छप गई। मेरा विचार था कि कोई एक छापेगा तो दूसरे को मना कर दूँगा लेकिन तीनों में ही एक साथ छप गई। इससे आप खुद को खोकर लिखी हुई रचना की उपादेयता का अन्दाजा लगा सकते हैं। हमें भी तसल्ली होती है कि हम कोई निरर्थक काम नहीं कर रहे हैं।

भूपेश : साक्षात्कार के अन्तिम प्रश्न के रूप में वर्तमान साहित्यकारों, श्रोताओं और पाठकगण के लिए आपका क्या संदेश है?

सहगल साहब : जैसा कि मैंने बताया कि पहले कितनी, कितनी, कितनी पत्रिकाएं बिकती थी। जबकि आज जो बुक सेलर हैं, स्टोल लगाकर किताबें बेचते हैं वो गिनी चुनी पत्रिकाओं की चार–पाँच ही प्रतियाँ ही मँगवाते हैं और कई बार वे भी नहीं बिकती। साफ है पाठकगण तो कम हुए ही हैं। लेकिन अच्छे साहित्य का महत्त्व तो हमेशा रहेगा।

भूपेश : धन्यवाद, सहगल साहब। मेरे रिसर्च सम्बन्धी कार्य के लिए साक्षात्कार द्वारा मार्गदर्शन देने के लिए हृदय से आभार।

सहगल साहब : थैक्यू वेरी मच।